Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 4, July-2022, ISSN 2230-7540

बनारस की लोक कला धर्म एवं संस्कृति के परिपेक्ष्य में

Prashant Kumar Vishwakarma*

[1] Research Scholar, Eklavya University, Damoh, M.P.

सारांश - लोक चित्रकला के रूप में शैलीगत परिवर्तन बहुत कम और अत्यन्त धीरे धीरे होता है। लोक कला का मूल धर्म है। इष्ट देवता की पूजा के लिए उनके द्वारा बनाई गयी मिट्टी की आकृतियाँ पर्वों या त्यौहारों पर घर के लोगों द्वारा आम के पत्तों से बन्दनवार और तरह-तरह के फूलों से की जाने वाली घर की सजावट उनके कलात्मक पक्ष की ओर सकेंत करते हैं। लोक चित्रों में कोहबर, नागपंचमी, गोधना, चैक पूरना, हाथ का थापा, दीपावली आदि प्रमुख है। बनारस के इतिहास में वैदिक विश्वासांे के साथ-साथ नाग और यक्ष पूजा का बोलबाला देखते हैं। भारत वर्ष में काशी को ही सर्वाधिक पवित्र हिन्दू माना जाता रहा है। और यहां की तीन मान्यता प्रमुख है।

मुख्य शब्द - लोक कला, काशी, धार्मिक, लोक शैली

---------------------------------X---------------------------------

प्रस्तावना

धार्मिक भावनाएँ प्रारंभ से ही कला के मूल में रही हैं। धर्म अक्सर लोकगीतों, लोकचित्रों और लोककथाओं में देखा जाता है। लोक चित्रकला के रूप में शैलीगत परिवर्तन बहुत कम और बहुत धीरे-धीरे होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि लोक कलाओं का धर्म से गहरा संबंध है। लोक कलाओं का धार्मिक महत्व यह भी है कि यह मानव समाज को एकता के सूत्र में बांधती है। यह न केवल बनारस में बल्कि पूर्वी उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बिहार तक फैले भोजपुरी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर पाया जाता है। हालाँकि इसमें बनारस की स्थानीय विशेषताएँ हो सकती हैं। ऐसे कई त्यौहार और कार्यक्रम हैं जो सामूहिक रूप से मनाए जाते हैं। धार्मिक लोक कलाएँ हमारे मानवीय लोक धर्मों की रक्षा करती हैं। महिलाओं द्वारा घर के अंदर या दरवाजे पर मेहमानों के स्वागत के लिए बनाई गई रंगोली या दीवारों पर लिखी आकृतियाँ या व्रत के अवसर पर इष्ट देवता की पूजा के लिए उनके द्वारा बनाई गई मिट्टी की आकृतियाँ। त्योहारों या त्योहारों पर घर के लोग आम की पत्तियां बनाते हैं। बंदनवार और विभिन्न प्रकार के फूलों से घर की सजावट उनके कलात्मक पक्ष को दर्शाती है। 1 वस्तुओं की सजावट जिस पर विवाह, शुभ अवसरों आदि पर विवाह मंडप में एक छोटा पेड़ रखा जाता है जिसके ऊपर लकड़ी की कई झोपड़ियाँ बनी रहती हैं। इस तरह से बने सुग्गे ठठेरी बाजार, विश्वनाथ गली और नरियारी बाजार में शादी के दिनों में बड़ी संख्या में देखे जाते हैं। इसे भी गांव के बढ़ई ने बनाया है. बढ़ई घरों के खंभों, खंभों और दरवाजों पर सुंदर नक्काशी करते हैं। गाँव का लोहार कजरौटा, पन्हसूल, चाकू, हंसुवा और चिमटा पर भी डिज़ाइन बनाता है। इसके अलावा गांवों में तेल और गन्ना पीसने वाले पत्थर के कोल्हुओं पर विभिन्न प्रकार के आकर्षक घोड़े, हाथी, पुरुष, महिलाएं और घुड़सवारों की आकृतियां खुदी हुई मिलती हैं, जो पूरी तरह से लोक शैली की हैं। आज ऐसे हजारों कोल्हू गांवों में जगह-जगह फैले हुए हैं। कारण यह है कि आधुनिक युग में मशीनों द्वारा तेल कुचलने के कारण वे अब बेकार हो गये हैं।2

लोक कला एवं धार्मिक शैली पर आधुनिकता का प्रभाव आजकल घरेलू परिवार टूट रहे हैं और लोग गांवों से शहरों की ओर जा रहे हैं। पहले जो घर की देवरानी-जेठानी अकेले ही सारी भूमिकाएं निभाती थीं, अब शादी-ब्याह के मौकों पर भी भीड़ नहीं जुट पाती। अब पारंपरिक त्योहारों का स्थान कामकाजी पार्टियों, महिला क्लबों, प्रदर्शनियों, कॉकटेल पार्टियों, पिकनिक और सबसे बढ़कर सिनेमा और टेलीविजन ने ले लिया है। आज ये सभी आधुनिक लोक उत्सव हैं। इसलिए शहरों में रहने वाले मध्यमवर्गीय परिवारों में भी लोक उत्सवों का आधार बदल रहा है। आजकल की अर्ध-आधुनिक महिलाओं को दिवाली और

www.ignited.in

अन्य त्योहारों पर चित्र बनाना दीवार खराब करने जैसा लगने लगा है। फिर भी, कहीं न कहीं एक संस्कृति ऐसी है जो हमें इन त्योहारों के दौरान कुछ करने के लिए मजबूर करती है।

शायद इसलिए कि लोकोत्सव हम उखड़े हुए नागरिकों के लिए अपने मूल स्रोतों को याद रखने का एक जरिया है। बनारस तथा आस-पास के स्थानों में विवाह, त्यौहार आदि शुभ अवसरों पर घर की महिलाओं द्वारा विभिन्न प्रकार से चित्रकारी करने की प्रथा है। वहाँ 3 अलग-अलग प्रकार की चित्रकारियाँ हैं जो आज भी उसी रूप में बनाई जाती हैं। इन चित्रों को बनाते समय महिलाएं अक्सर उन्हीं चित्रों पर लोकगीत गाती हैं जो त्योहारों से संबंधित होते हैं। उनका मानना है कि एक निश्चित समय पर एक निश्चित प्रकार की पेंटिंग करने से एक निश्चित प्रकार का कल्याण होता है। पेंटिंग बनाते समय वह सभी मनुष्यों के कल्याण की कामना करती हैं। इस प्रकार बनाए गए चित्रों में हमने कोहबर, नागपंचमी, गोधना, चैक पूर्णा, हाथ का थापा, दिवाली आदि के प्रतीक तथा लोक धर्म एवं कला के प्रतीकों का वर्णन किया है।

कोहबर, जो विवाह के अवसर पर घर के अंदर-बाहर तथा मुख्य द्वार पर बनाया जाता है, कोहबर कहलाता है। घर के अंदर का कोहबर पूजा के लिए और बाहर का कोहबर सजावट और शुभता के लिए बनाया जाता है। जिनसे हाथी, घोड़े, नर, नारी, सूर्य, चंद्रमा, पक्षी, फूल, पत्तियाँ आदि बनाये जाते हैं। खाली जगह पर राम-राम या सीताराम भी लिखा होता है। प्रागैतिहासिक काल के शैलचित्रों में कोहबर एवं अन्य चित्र गरई नदी के तट पर स्थित शैलाश्रयों में बनाये गये हैं। जो बनारस, सोनभद्र मार्ग पर स्थित है। कोबहार शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द कोश्तावर से हुई है।

कोष्ठवार विवाह के उस स्थान को संदर्भित करता है जहां परिवार के देवता को स्थापित किया जाता है। आज बढ़ती आधुनिकता से प्रभावित होकर महिलाएं भी अपने चित्रों में रंग-बिरंगे बाजारी रंगों का प्रयोग करने लगी हैं, जिनमें गुलाबी, नीला और पीला रंग प्रमुख हैं। चैकपूर्णारू चैकपूर्णा की परंपरा हमारे देश में प्राचीन काल से चली आ रही है। शुभ अवसरों पर गोबर लीपना, चैराहे की सफाई आदि कार्य आज की तरह बौद्ध काल में भी किये जाते थे। चैक पूर्ण का वर्णन रामचरित मानस में अनेक स्थानों पर किया गया है।

रच्चु मंद मनि चैक चारु। मनावन वेगी बाजार कहूँ कहूँ? बीथि सकल सुगन्ध सिचाईं। गणमनि रचि बहु चैक पुराई।।4।

बनारस के इतिहास में वैदिक विश्वासों के साथ-साथ नाग और यक्ष पूजा का बोलबाला देखते हैं। उस युग में भी शिवपूजा अवश्य प्रचलित रही होगी। इसका विस्तार गुप्त युग से खूब था। बनारस बौद्ध धर्म का भी एक प्रधान क्षेत्र था। पुरातात्विक अवशेषों के आधार पर बनारस सारनाथ तक ही सीमित था। बनारस क्षेत्र मे शैव धर्म का बोलबाला था। अनेक धर्मो का अड्डा रहते हुए भी शैव धर्म की ही केन्द्र थी और अब भी है। पौराणिक साहित्य भी बनारस के शिवलिंगों से भरा है। समय की गति के अनुसार जैसे जैसे बनारस का इतिहास बढ़ता है वैसे-वैसे शिवलिंगों की सख्ंया भी बढ़ती जाती है। शैव धर्म के साथ ही गंगा की भी महिमा बढ़ी। गहढवाल युग में घाटो का निर्माण हुआ।5 बनारस धर्म तीर्थ के साथ-साथ सस्ंकृति शिक्षा का एक केन्द्र थी। जातक कथाओं में यहाँ की शिक्षा प्रणाली का उल्लेख है। गुप्तकाल में यह नगर वैदिक शिक्षा की केन्द्र बन गई। गहडव़ाल युग में यहाँ के पंडित शिक्षक, विद्यार्थियों को अपने यहाँ रखकर अनेक विषयों में शिक्षा देते थे। आज तक बनारस में सस्ंकृत की शिक्षा अवाधगति के चली आ रही है। यहाँ के पण्डितों ने अधिक प्राचीन ग्रन्थों पर टीकायें लिखी और आधुनिक दृष्टि से सस् कृत भाषा की रक्षा यहाँ के शिक्षाविद् का बड़ा सहयोग रहा है। यह उन्हीं का प्रभाव था कि देश के कोने-कोने से विद्यार्थी बनारस आकर ज्ञानार्जन करने में अपना गौरव प्राप्त किये थे।

बनारस की महत्ता केवल तीर्थ और विद्या पर ही अवलम्बित नहीं था। बनारस में व्यापार न होता तो यह नगरी केवल आश्रम ही बनकर रह जाती और उसमें उस नगरीय संस्कृति का अभाव होता जिसके लिए बनारस आज भी विख्यात है। इस व्यापारिक महत्ता के अनके साहित्यिक और पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं। बौद्ध साहित्य में बनारस के व्यापारियों की प्रशंसा की गई है और उनके व्यापार के प्रधान अंग बनारस का सम्बन्ध है।

बनारस अपनी पुरानी परम्परा को आज भी अक्षुण्ण बनाये हुए है। यहाँ के व्यापारियों ने हमेशा देश, समाज और शिक्षा की उन्नति में सहयोग दिया है। काशी के स्थापत्य कला में बौद्ध बिहार भी अपना स्थान रखते है। बौद्ध भिक्षुओं के ये निवास स्थान आज खण्डहरों के रूप में विद्यमान है। इन विधाओं में सर्वविदित धर्मचक्र जिन

www.ignited.in

बिहार है इस गहडवाल राजा गोविन्दचन्द्र की रानी कुमार देवी ने 12वीं शदी में बनवाया था। सारनाथ में प्राप्त अन्य बिहारों के यह रचना भिन्न है। इसके मध्य में एक आँगन है। आँगन के तीन ओर छोटे छोटे कमरे तथा बाहरी भाग में दो विशाल परकोटे और आंगन हैं। विभिन्न धर्मो के प्रतीक मन्दिरों का वाराणसी अनुपम केन्द्र है। इस समय मंदिरों के भग्नावशेष विद्यमान है। वे गहड़वाल शासन काल के हैं। दुर्भाग्यवश अब समूचे अवशेष नहीं बचे हैं। 10वीं शदी को कर्ममेश्वर महादवे का मन्दिर बनारस में कन्दवा ग्राम के पास तलाब के किनारे अवशिष्ट है। गृहवस्तु के उत्तम दृष्टान्त काशी में आज भी विद्यमान है। इनमें देवकी नन्दन की हवेली, काठ की हवेली, कश्मीरी लाल की हवेली तथा चेत सिहं की हवेली अत्यन्त प्रसिद्ध है।6

बनारस गंगा के धनुषाकार बाये तट पर स्थित भव्य दृश्यावली प्रस्तुत करता है। यह देश के अन्य भागों में केवल नदी मार्ग से ही नहीं रेलमार्ग से भी जुड़ा है। ग्रान्ड ट्रक रोड शहर के बाहरी ओर से जाती है। जो इस वर्तमान समय में सडक़ों पर पूरे शहर में अच्छी चैडी रोड़ ब्रिज बन गये हैं। बस सेवा द्वारा भी यह सभी प्रमुख मार्गो का कायाकल्प हो गया है। बाबतपुर हवाई मार्ग से अवागमन भी सुलभ है। बनारस गंगा के किनारे-किनारे लगभग सभी मार्ग पूर्ण है, जो लगभग 7 किमी तक है। ऊँचाई पर बसे होने के कारण बाढ़ की विभीषिका से परे है। ठोस कंकरीली भिति दशाश्वमेघ के पास गोदौलिया नाले द्वारा कर गई मालूम पड़ती है। जिसके मध्य से गंगा मोटर मार्ग द्वारा सुलभ हो गयी है।

बनारस के तल रूप में प्राकृतिक स्वागत प्रभाव शहर के फैलाव पर शुरू से ही रहा है। शहर केवल ऊँची भूमि पर ही बढ़ गया है। पहले तो गंगा के आस-पास फिर चेतगजं , कचहरी मार्ग पर पश्चिम तथा उत्तर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का दक्षिण में वर्तमान विस्तार है। शहर के बीच स्थित बेनियाबाग, मैदागिन, महादेरी तलों से जल की निकासी कर उन्हें उद्यान से परिचित किया गया है। वर्तमान से शहर का खुलापन समाप्त होता जा रहा है। शहर के बडे बड़े तालाब को पाटकर मकान बनाये जा रहे है। शहर के बेनियाबाग, मैदागिन, टाउन हाल के मैदान धीरे-धीरे आवासों व दुकानों में भरते जा रहे हैं। शहर के अन्दर का खुलापन समाप्त हो गया है और यह शहर भी पर्यावरण प्रदूषण से प्रभावित है।7 बनारस की संस्कृति हिन्दू समाज में सहस्रों वर्षों से श्रद्धा रही है। यह श्रद्धा इतनी प्रगाण थी और भी भारत वर्ष में काशी को ही सर्वाधिक पवित्र हिन्दू माना जाता रहा है और यह परम्परा पर्याप्त प्राचीन हो गयी है। सुदूर दक्षिण से काश्मीर तक तथा आसाम से गुजरात तक के सभी प्रदेशांे से कष्ट सहकर लाखों यात्रा आज भी काशी की यात्रा को आते हैं। और अपने अन्तःकरण में शान्ति तथा उल्लास का अनुभव करते है। बनारसी को समझने के लिए कुछ प्रचलित मान्यताओं पर भी विचार करना होगा। एक तो यह कि नगरी विश्व से अलग तीन लोक में न्यारी शंकर के त्रिशूल पर बनी है अर्थात् अनोखी है। दूसरी मान्यता है कि बनारस महाशमशान है। यहाँ मरने पर मुक्ति मिलती है। पुनर्जन्म नहीं होता है। यहाँ उत्तरवाहिनी गंगा सब पाप हर लेती है। अतः पापी भी पूर्णरूप से निश्चन्त हो जाता है तीसरी कहावत यह है कि अर्थात् यह आशरण शरण नगरी है। जिसका कहीं ठिकाना नहीं है जो दीन-हीन अकिंचन है। वह भी इस नगर में दशाश्वमेघ पर गंगा में एक गोता मारकर अश्वमेघ यज्ञों का फल प्राप्त कर सकता है। मणिकर्णिका कुण्ड में डुबकी लगाकर मुक्ति की दुर्लभ मणि प्राप्त कर सकता है।8 मान्यता ने एक विश्वास प्रदान किया है और दीनता की भावना का उन्मूलन किया है। खाक भी किस मणि का पारस है। शहर मशहूर यह बनारस है यह बनारस की इस नगरी की मिट्टी से प्यार की साक्षी देने वाली कहावत यहाँ के सतोंषी स्वभाव की चर्चा बहुत पुरानी है। गुप्तयुग में कहते थे देवी-देवी गँगा मिष्ठान युगागति वाराणस्था विशालक्षी वासः कस्य न रोचेत" जिसका नया सस्ंकारण है चैना चबैना गंगा जल जो दुखे करतार काशी कबहु न छोड़िये विश्वनाथ को धाम मरने पर गंगमिले, जिते लगड़ा आम। इन भावनाओं मे सन्तोष अल्प में सुख अनुभव करने और हर हालात मे बनारसी का काशी से लगाव है। जब बनारस की बात कही जाती है तब उसका मतलब पत्थरों से बने इसी गलियों वाले नगर से होता है। गलियों में आज भी कोई बड़ी सवारी प्रवेश नहीं कर सकती है। कार-रिक्शे सभी एक सीमा के बाद रूक जाते हैं। अन्तः में आदमी को अपने भरोसे ही चलना पड़ता है। उत्तर भारत के प्रमुख यात्रा पथ पर रहने की नियति उसे बराबर विदेशी हमलावरों तथा राष्ट्र के भीतर के उथल-पुथल के सामने निराश्रित फेकं देती रही है ऐसी स्थिति मे बनारस ने एक ऐसी निजी सुरक्षात्मक चरित्र विकसित किया है जिन लोगों ने इसका नक्शा बनाया है गंगा किनारे पक्की जिसे वही से मंडित किया वे बहुत ही सावधान लोग थे। सुनियोजित तरीके से फाटक लगे थे जिन्हें जरूरत पड़ने पर संकेत मात्र के बाद किया जा सकता था। बनारस की सबसे बड़ी बनारसी साड़ियों की मण्डी इन्हीं गलियों के मूल भुलैया में स्थिति है। वाराणसी में आम लोगों के जीवन में बहुत पहले से ही चित्र घुलमिल गये थे। कोई भी पर्व हो त्यौहार हो सादी ब्याह हो घरों मे चित्रकारी करवाना अनिवार्य हो गया था। अपने घरों को सुन्दर से

www.ignited.in

सुन्दर चित्रों से सजाना परम्परा बन गई थी। बनारस की चित्रकला आज भी सगींत एवं नाट्क कला का भी विकास हुआ। बनारस में रईशों व्यापारियों व आम लोगों ने इन ललित कलाओं को फूलने फलने में बहुत सहयोग दिया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. जसलीन धमीजा- भारत की लोककला और हस्त्रशिल्प भूमिका, पृ0सं0-2-3
2. असित कुमार हल्दर- भारतीय चित्रकला, पृ0सं0-36
3. वाचस्पति गौराले - भारतीय चित्रकला, पृ0सं0-246
4. रामचरित मानस- अयोध्या काण्ड-617 वहीं उत्तरकाण्ड 9/3
5. उमा पाण्डये -वाराणसी, पृ0स0-81
6. डॉ0, राम लोचन सिंह- वाराणसी एवं संक्षिप्त भौगोलिक सर्वेक्षण यह बनारस है, पृ0सं0-28
7. डॉ0 भानू शंकर मेहता- बनारसी यह बनारस है पत्रिका उलुआ, पृ0स0 -33
8. वाराणसी एक बहुत पुराना नया शहर, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, पृ0स0 -24

Corresponding Author

Prashant Kumar Vishwakarma*

Research Scholar, Eklavya University, Damoh, M.P.